बुद्ध राम

बनाम्

राजस्थान राज्य

(बी०पी०सिन्हा, मुख्य न्यायमूर्ति, न्यायमूर्ति के०एन०वान्चू व जे०सी० शाह)

कूट-रचना- विस्थापित व्यक्ति द्वारा प्रतिकर के लिए प्रार्थनापत्र -बंदोबस्त अधिकारी के समक्ष कूटरचित दावे की प्रमाणित सत्यप्रतिलिपि प्रस्तुत किया जाना - बंदोबस्त अधिकारी - यदि वास्तविकता में कूटरचित दस्तावेज प्रयोग में लाया गया - यदि आवश्यक है तो बंदोबस्त अधिकारी द्वारा शिकायत प्रस्तुत किया जाना द०प्र० सं० 1898(1898 का 5) धारा 195(1)(c) दं०प्र०सं० 1860(1860 का अधि० 45) धारा 471 विस्थापित व्यक्ति (प्रतिकर व पुनर्वास अधिनियम 1954)(1954 की धारा 44)।

अपीलार्थी जो एक विस्थापित व्यक्ति था उसके एक द्वारा एक प्रार्थना पत्र सहायक बंदोबस्त अधिकारी जो विस्थापित व्यक्तियों हेतु क्रियाशील था के समक्ष एक प्रार्थना-पत्र प्रतिकर व पुनर्वास हेतु अधिनियम, 1954 के तहत प्रस्तुत किया और प्रार्थना-पत्र के समर्थन में याचिका की सत्य प्रतिलिपि दाखिल की गई। जाँच उपरान्त अपीलार्थी द्वारा दाखिल प्रपत्र कूटरचित पाया गया। अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश द्वारा अपीलार्थी को धारा 471 व धारा420 सपठित धारा 511 भा०दं०सं० के तहत दोष सिद्ध किया गया। सत्र न्यायाधीश द्वारा अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश के दंडादेश की पुष्टि की गई तथा जुर्माने की रकम से अवमुक्त किया गया। माननीय उच्च न्यायालय ने अपने पुनरीक्षण आदेश में सत्र न्यायाधीश के उप-दंडादेश की पुष्टि की गई। अपीलार्थी की ओर से कथन किया गया कि दंड प्रक्रिया की संहिता की धारा 195(1)(c) के अनुसार बंदोबस्त अधिकारी स्वयं में एक न्यायालय है और उसके द्वारा की गई शिकायत के अभाव में अभियोजन सक्षम नहीं है। याचिका की सत्य प्रति दाखिल किया जाना भा०दं०सं० की धारा 471 के तहत कोई अपराध गठित नहीं करता।

अवधारित किया कि दं०प्र०सं० की धारा धारा 195(1)(c) की तहत बंदोबस्त अधिकारी द्वारा शिकायती प्रार्थना-पत्र प्रस्तुत किया जाना अनिवार्य नहीं है। ऐसा इसलिये क्योंकि वह अपने आप में एक न्यायालय है। सहायक बंदोबस्त अधिकारी के समक्ष मूल कूटरचित दस्तावेज नहीं था बल्कि उसकी छायाप्रति थी। उक्त धारा में वर्णित व्याख्या से स्पष्ट है कि यदि कोई कूटरचित दस्तावेज न्यायालय में प्रस्तुत किया जाता है और न्यायालय उक्त कूटरचित दस्तावेज को संज्ञान में लेते हुए शिकायत दर्ज कराता है तभी यह लागू होगा।

सन्मुखसिंह बनाम राजा (1949) एल०आर० *77* आई०ए० *7*, लागू।

भा०दं०सं० की धारा 471 वहीं दंडनीय होंगे जहाँ कूटरचित दस्तावेज को मूल दस्तावेज के रूप में प्रयोग में लाया जाये। जबकि वर्तमान मामले में सत्यापित प्रति दाखिल किया गया है और कूटरचित दस्तावेज को मूल के रूप में प्रयोग में लाया गया है। भा०दं०सं० की धारा 471 व दं०प्र०सं० की धारा 195(1)(c) में मूल अन्तर यह है कि धारा 471 भा०दं०सं० में उक्त कूटरचित दस्तावेज को स्वयं प्रस्तुत किया जाना अनिवार्य नहीं है जबकि 195(1)(c) स्वयं प्रयोग में लाया जाना अनिवार्य है।

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकारिताः आपराधिक अपील संख्या 229 वर्ष 1960।

अपील विशेष अनुमति अपील राजस्थान उच्च न्यायालय के आपराधिक निगरानी संख्या 228 वर्ष 1959 में पारित निर्णय एवं आदेश के विरुद्ध अपील

सरदार बहादुर----------------अपीलार्थी की ओर से।

एस०के० कपूर एवं पी०डी०मेनन --------------उत्तरदाता की ओर से।

24 जुलाई 1962- न्यायालय का निर्णय सुनाया गया।

वांचू, जे० –विशेष अनुमति द्वारा यह अपील राजस्थान उच्च न्यायालय में

अपीलार्थी पश्चिमी पाकिस्तान से था तथा एक विस्थापित व्यक्ति द्वारा उसे पुनर्वास विभाग द्वारा जुलाई 1949 में एक पंजीकरण प्रमाण-पत्र प्राप्त हुआ। वर्ष 1954 विस्थापित व्यक्ति (क्षतिपूर्ति व पुनर्वास) अधिनियम की धारा 44 के तहत गठित किया गया। उसके पश्चात् केन्द्र सरकार द्वारा प्रावधान किया गया कि उक्त विभाग से सत्यापन के पश्चात क्षतिपूर्ति हेतु प्रार्थना-पत्र प्रस्तुत करें। उक्त आदेश के अनुपालन में अपीलार्थी द्वारा अधिनियम में वर्णित नियम के अनुसार क्षतिपूर्ति प्रार्थना-पत्र (प्रदर्श प-2) सहायक बंदोबस्त अधिकारी अलवर के समक्ष माह मार्च 1955 में प्रस्तुत किया और उक्त प्रार्थना-पत्र के समर्थन में सत्यापित प्रति याचिका का प्रस्तुत किया गया जो (प्रदर्श प-3) है। ऐसा प्रतीत होता है कि सहायक बंदोबस्त

अधिकारी को 132 एकड़ कृषि भूमि आवेदकगण को अस्थायी रूप से तहसीलदार नगर को निर्देशित करे कि उक्त के संबंध में अपीलार्थीगण से संपर्क कर प्रारूप तैयार करें। इस मध्य खुफिया जानकारी प्राप्त हुई कि विस्थापित व्यक्ति उक्त क्षेत्र में जाली एवं कूटरचित याचिका के माध्यम से भूमि प्राप्त किया है। परिणामस्वरूप अपीलार्थी भा०दं०सं० की धारा 466,471 व 420 सपठित धारा 511 के तहत अभियोजित किया गया और उक्त मामले को विचारण हेतु सत्र न्यायालय अलवर को प्रेषित किया गया।

यहाँ इसका उल्लेख किया जाना अनिवार्य है कि प्रदर्श प 3 मूल की छायाप्रति प्रदर्श प 2 प्रार्थना-पत्र के साथ कभी भी सहायक बंदोबस्त अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत नहीं की गयी , न ही सत्र न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत की गई। उक्त याचिका का विचारण सहायक सत्र न्यायाधीश के न्यायालय में किया गया जहाँ उसे विचारण हेतु स्थानान्तरित किया गया। अपीलार्थी ने अपने बचाव में अभिवचन किया कि प्रदर्श प 2 कभी भी उसके द्वारा दाखिल नहीं किया गया , न ही उक्त प्रपत्र से उसका कोई वास्ता है और न ही उसके द्वारा प्रस्तुत प्रार्थना -पत्र के संलग्नक से। उसके द्वारा यह भी कथन किया गया कि सहायक बंदोबस्त अधिकारी एक न्यायालय के रूप में कार्य कर रही थी और धारा 471 का अपराध तभी गठित होता है जब कोई प्रपत्र साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत किया जाये और यदि प्रस्तुत किया जाता है तथा सहायक बंदोबस्त अधिकारी द्वारा ऐसी कोई रिपोर्ट नहीं की जाती है तो ऐसी स्थिति में अभियोजन निष्प्रभावी है। सहायक सत्र न्यायाधीश ने अपीलार्थी के इस कथन को अस्वीकार करते हुए कहा कि धारा 471 भा०दं०सं० के तहत प्रसंज्ञान लेने से पूर्व सहायक बंदोबस्त अधिकारी द्वारा शिकायती प्रार्थना -पत्र प्रस्तुत किया जाना अनिवार्य था। यह भी अवधारित किया गया कि व याचिका (प्रदर्श प 2) दावे की सत्यप्रति (प्रदर्श प 3) व अन्य प्रपत्र

अपीलार्थी द्वारा तैयार किये गये। पता उसी के द्वारा सत्यापित किया गया। यह भी अवधारित किया गया कि ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है कि जिससे यह प्रतीत हो कि प्रदर्श प 2 प्रार्थना-पत्र अपीलार्थी द्वारा सहायक बंदोबस्त अधिकारी अलवर के कार्यालय में दाखिल किया गया। यहाँ यह संशय नहीं है कि उक्त प्रपत्र प्रदर्श प 2 संलग्नक प्रपत्र किसी और व्यक्ति के द्वारा सहायक बंदोबस्त अधिकारी के कार्यालय में प्रस्तुत किया गया। इसलिए अपीलार्थी को भा०दं०सं० की धारा 471,420 सपठित धारा 511 में कारावास व अर्थदण्ड से दोषसिद्ध किया गया। परिणामस्वरूप अपील सत्र न्यायाधीश अलवर के समक्ष प्रस्तुत किया गया। सत्र न्यायाधीश अलवर द्वारा निर्णय में मामूली बदलाव करते हुए अपीलार्थी के कारावास के दण्ड को बरकरार रखा और आरोपित अर्थदण्ड की अदायगी से मुक्ति प्रदान की गई। उक्त निर्णय में धारा 471 भा०दं०सं० में दोषी पाये जाने पर 2 वर्ष का कठोर कारावास व धारा 420 सपठित धारा 511 भा०दं०सं० 1 वर्ष का कठोर कारावास से दण्डित किया गया तथा यह उल्लेख किया गया कि दोनों सजाएँ साथ -साथ चलेंगी।

इसके बाद अपीलकर्ता उच्च न्यायालय में पुनरीक्षण के लिए गया और वहाँ मुख्य मुद्दा यह था कि सहायक बंदोबस्त अधिकारी द्वारा शिकायत के अभाव में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(c) मद्देनजर अभियोजन पोषणीय नहीं था। उच्च न्यायालय ने इस दलील को खारिज कर दिया। इसके अतिरिक्त, नीचे दी गई दो अदालतों के निष्कर्षों को गुण -दोष के आधार पर चुनौती दी गई; लेकिन उच्च न्यायालय ने माना कि नीचे की दो अदालतों द्वारा निकाले गए तथ्य के समवर्ती निष्कर्षों में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं था। अंत में , यह तर्क दिया गया कि प्रदर्श प-3 केवल एक प्रति थी इसलिये धारा 471 भा०द०सं० के तहत कोई अपराध नहीं बनता। लेकिन इस विवाद को भी उच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया। परिणामस्वरूप उच्च न्यायालय ने सत्र न्यायालय के आदेश की पुष्टि की।

तत्पश्चात् इस न्यायालय में अपील योजित किए जाने हेतु आवेदन पत्र दिया गया जिसे अस्वीकार कर दिया गया। इसके अपीलकर्ता विशेष अनुमति के लिए इस न्यायालय में आया जिसे मंजूर कर लिया गया;और इस तरह से यह मामला इस न्यायालय के समक्ष आया।

अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उन बिन्दुओं को दोहराया गया जिनका आग्रह उच्च न्यायालय में किया गया था। उनका पहला तर्क यह था कि सहायक बंदोबस्त अधिकारी को दं०प्र०सं० की धारा195(1)(c) के तहत एक अदालत माना जाना चाहिए और इसलिए सहायक बंदोबस्त अधिकारी के शिकायत के अभाव में अभियोजन अक्षम था। इसके अलावा, यह भी तर्क दिया गया है कि चूँकि प्रदर्श प-3 केवल एक प्रति है इसलिये भारतीय दंड संहिता की धारा 471 के तहत कोई अपराध गठित नहीं करता; भले ही यह स्वीकार कर लिया गया कि आवेदन (प्रदर्श प-2) संलग्नकों के साथ अपीलकर्ता द्वारा या उसकी ओर से सहायक बंदोबस्त अधिकारी के समक्ष आयोजित किया गया था। अंत में यह भी अभिवचन किया गया कि एसा कोई साक्ष्य नहीं है कि आवेदन (प्रदर्श प-2) अपीलकर्ता या उसकी ओर से तैयार किया गया था।

हम इस अपील के प्रयोजनों के लिए यह तय करना आवश्यक नहीं समझते हैं कि 1954 के अधिनियम 44 के तहत सहायक बंदोबस्त अधिकारी के कार्य करते समय दं०प्र०सं० की धारा-195(1)(c)के तहत एक न्यायालय माना जा सकता है। लेकिन सवाल अब भी यह बना हुआ है कि सहायक बंदोबस्त अधिकारी द्वारा शिकायत आवश्यक थी जबकि इस मामले में यह मूल जाली दस्तावेज नहीं था। जो उसके सामने पेश किया गया था ,बल्कि उसकी एक प्रति थी। यह प्रश्न सन्मुखसिंह बनाम राजा के मामले में न्यायिक समिति के समक्ष रखा गया जिसमें अवधारित किया गया कि धारा - 195 (1) (c) केवल उस दस्तावेज को संदर्भित करता है जिसे जाली माना गया हो , न कि उसकी प्रति को।

इसलिये उस अदालत से शिकायत की अनुपस्थिति जिसमें जाली प्रतियाँ होती हैं , प्रस्तुत किया गया दस्तावेज जालसाजी या जाली दस्तावेज का उपयोग करने के अपराध के लिये मुकदमे के रूप में दर्ज करने में कोई बाधा नहीं है।

न्यायिक समिति ने पाया कि उपरोक्त धारा केवल कथित जाली दस्तावेज का उल्लेख कर सकती है, उसकी प्रतिलिपि का नहीं। यह दृष्टिकोण, जो शब्दों के स्पष्ट व्याकरणिक अर्थ से मेल खाता है, मामले के व्यावहारिक सामान्य ज्ञान द्वारा समर्थित है, जैसा कि गिरधारी लाल बनाम सम्राट मामले में, वह अदालत जिसके समक्ष किसी दस्तावेज की प्रति प्रस्तुत की जाती है वह वास्तव में मूल की वास्तविकता पर कोई राय व्यक्त करने की स्थिति में नहीं होता। यह भी सुझाव दिया गया कि जाली दस्तावेज को यदि एक प्रति के रूप में प्रस्तुत की गई है तो कम से कम साक्ष्य के रूप में दिया जाना कहा जा सकता है और यह प्रति मूल प्रति से तैयार की गई दस्तावेज है जो द्वितीयक साक्ष्य कहा जा सकता है। जाली दस्तावेज स्वयं साक्ष्य में नहीं दिया जाएगा। इस दृष्टिकोण से उक्त प्रपत्र कूटरचित माने जाएगें और उसे साक्ष्य में दाखिल नहीं किए जाने चाहिए।

धारा 195(1) कोई न्यायालय प्रसंज्ञान नहीं ले सकता।

a) ....

b) ....

c) इस संहिता की धारा 463 में वर्णित या धारा 471 या धारा 475 या धारा 476 के अधीन दंडनीय अपराध का जब ऐसे अपराध के बारे में अभिकथित है कि वह किसी न्यायालय में की कार्यवाही में पेश की गई, साक्ष्य में दी गई दस्तावेज के बारे में किया जाएगा जहाँ ऐसे न्यायालय के या न्यायालय के वैसे अधिकारी द्वारा जिसे वह न्यायालय अधीनस्थ हो, अन्यथा नहीं करेगा।

इस प्रावधान के स्पष्ट व्याकरणिक संरचना से ज्ञात होता है कि न्यायालय द्वारा एक शिकायत की आवश्यकता होती है जब अपराध किसी दस्तावेज को नकली बनाने या जाली

दस्तावेज को वास्तविक के रूप में न्यायालय के समक्ष साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। इसलिये यह स्पष्ट है कि जब जाली दस्तावेज न्यायालय में प्रस्तुत किया जाता है तभी न्यायालय द्वारा शिकायत की आवश्यकता होती है। हालाँकि जहाँ न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया गया दस्तावेज जाली नहीं होता है , उस संबंध में धारा 195(1)(c) लागू नहीं होती है। इसका कारण, न्यायिक समिति द्वारा कहा गया कथन "यह सामान्य व्यावहारिक समझ की बात है, कि जिस न्यायालय के समक्ष दस्तावेज की एक प्रति पेश की जाती है वह वास्तव में इसकी वास्तविकता पर कोई राय व्यक्त करने की स्थिति में नहीं होता है। " इसलिए भले ही सहायक बंदोबस्त अधिकारी को धारा 195(1)(c) के तहत एक न्यायालय माना गया हो, फिर भी किसी शिकायत की आवश्यकता नहीं थी क्योंकि जाली दस्तावेज स्वयं सहायक बंदोबस्त अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया गया था, बल्कि केवल उसकी एक छायाप्रति प्रस्तुत की गई थी।

इससे अगला प्रश्न यह उठता है कि वर्तमान प्रकरण की परिस्थिति में भा०दं०सं० की धारा 471 के तहत अपराध गठित हुआ माना जा सकता है कि नहीं। इस संबंध में प्रदर्श प-3 में सत्र न्यायालय द्वारा पाए गये तथ्यों का संक्षेप में उल्लेख कर सकते हैं । ये तथ्य यह थे कि प्रदर्श प-3 की मूल प्रति अपीलार्थी ने होटू राम, जो एक याचिका लेखक था, को दिये थे और उसने प्रदर्श प-3 की छायाप्रति बना दी थी। यह छायाप्रति महेश गौर, शपथ आयुक्त के समक्ष प्रस्तुत की गई जिसका मिलान करने के पश्चात् उसे सत्यापित किया गया था और फिर यह सत्यापित प्रति प्रार्थना-पत्र (प्रदर्श प-2) के साथ संलग्नक के रूप मुआवजे हेतु सहायक बंदोबस्त अधिकारी के समक्ष भेजा गया था। इसके अलावा इस बात के स्पष्ट प्रमाण हैं कि प्रदर्श प -3 की मूल प्रति जाली बनाई गई होगी क्योंकि ऐसा कोई दस्तावेज मुख्य

बंदोबस्त अधिकारी , पुनर्वास मंत्रालय, दिल्ली के कार्यालय से जारी नहीं किया गया था।

"जो कोई भी धोखेधडीं से किसी दस्तावेज को मूल के रूप में उपयोग करता है, जिसे वह जानता हो या प्रतीत होता हो कि वह जानता हो कि दस्तावेज जाली है , उसे उसी दंड से दंडित किया जाएगा जिस दंड से एक जाली दस्तावेज बनाने वाले व्यक्ति को दंडित किया जाता है।"

इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि अपीलकर्ता ने प्रदर्श प-3 की मूल प्रति का उपयोग किया था जो कि एक जाली दस्तावेज था जब उसने शपथ आयुक्त द्वारा उसकी छायाप्रति सत्यापित कराई थी। इसके बाद जब उसने इस छायाप्रति को अपने प्रार्थना-पत्र (प्रदर्श प-2) के साथ सहायक बंदोबस्त अधिकारी के पास भेजा था, उसका इरादा मूल प्रति जो कि एक जाली दस्तावेज था, को सहायक बंदोबस्त अधिकारी के समक्ष छायाप्रति के माध्यम से मूल के रूप उपयोग किया जाना था। ऐसा प्रतीत होता है कि 1954 के अधिनियम 44 के नियमों के तहत मूल सत्यापित दावे को भेजना आवश्यक नहीं है और यदि एक सत्यापित छायाप्रति भेजी जाती है तो यह पर्याप्त है और अपीलकर्ता ने यहीं किया। जब उसने मूल की प्रमाणित प्रतिलिपि भेजी जो जाली थी तो वह स्पष्ट रूप से मूल जाली दस्तावेज का उपयोग कर रहा था। इसके अतिरिक्त दूसरा साक्ष्य यह मिल रहा है कि उसने उस दस्तावेज की प्रतिलिपि बनवाई, जिसे वह जानता था या किसी कारणवश प्रतीत होता हो कि वह जानता था कि दस्तावेज जाली है। धारा 471 किसी जाली दस्तावेज को मूल के रूप में उपयोग किये जाने के संबंध में बात करता है ; इसमें यह नहीं कहा गया है कि ऐसा उपयोग केवल तभी हो सकता है जब मूल स्वयं निर्मित हो , क्योंकि अनुभाग को मूल के निर्माण की आवश्यकता नहीं होती है। उदाहरण के लिए , नियमों के तहत, यदि एक सत्यापित प्रति एक अन्य सत्यापित प्रति के निर्माण के लिए पर्याप्त होती है , तो उसी प्रकार हमारी राय में इस मूल दस्तावेज , यदि यह पता हो या माना गया हो कि दस्तावेज जाली है ,को वास्तविक के रूप में उपयोग करने के समान होगा। भा०दं०सं० की धारा 471 और दं०प्र०सं० की धारा 195(1)(c) में यह अन्तर है कि जहाँ धारा 195(1)(c) में यह आवश्यक है किसी व्यक्ति पर जाली दस्तावेज बनाने या उसे असली के रूप में उपयोग करने के लिए मुकदमा चलाने संबंधी शिकायत दर्ज कराने के लिए मूल दस्तावेज को न्यायालय में प्रस्तुत

करना आवश्यक है, बल्कि धारा 471 में मूल जाली दस्तावेज प्रस्तुत करना आवश्यक नहीं होता है। जहाँ जाली दस्तावेज की सत्यापित प्रतिलिपि तैयार करना संभव हो और वह सत्यापित प्रतिलिपि मूल जाली दस्तावेज के उद्देश्य की पूर्ति करती हो , वहां हमारी राय में मूल जाली दस्तावेज का उपयोग वास्तविक के रूप में किया जाना चाहिए, यद्यपि इसकी प्रमाणित प्रतिलिपि हो। इसलिए हमारा मत है कि चूँकि इस मामले में जाली दस्तावेज की सत्यापित प्रतिलिपि सहायक बंदोबस्त अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत की गई थी, इसलिए यह माना जाना चाहिए कि दस्तावेज, जिसके बारे में पता था या माना गया था कि यह एक जाली दस्तावेज है , वह धारा 471 के अर्थ में जाली दस्तावेज था।

अंत में यह आग्रह किया गया कि यह दिखाने के लिए कुछ भी नहीं था कि अपीलकर्ता को जानकारी थी कि दस्तावेज जाली था और यह भी कोई सबूत नहीं था कि अपीलकर्ता सहायक बंदोबस्त अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत किए गए आवेदन(प्रदर्श प-2) के संलग्नक के रूप में प्रदर्श प-3 के निर्माण के लिए जिम्मेदार था। अपीलकर्ता के मामले में, जैसा कि हम पहले ही बता चुके हैं कि अपीलकर्ता ने कभी भी प्रदर्श प-2 तैयार नहीं करवाया और न ही उसने प्रदर्श प-3 तैयार व सत्यापित करवाया। यह मामला पूरी तरह से असत्य है। इन परिस्थितियों में, हम कुछ भी अनुचित नहीं देख सकते हैं यदि निचली अदालते इस निष्कर्ष पर पहँची कि आवेदन (प्रदर्श प- 2) अपीलकर्ता द्वारा आवश्यक रूप से सहायक बंदोबस्त अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत किया गया होगा। यह कहना सही है कि किसी को भी कार्यालय में याद नहीं है कि आवेदन डाक द्वारा आया था या व्यक्तिगत तौर पर किसी के द्वारा दिया गया था ; लेकिन उन परिस्थितियों में जब इस बात की पुष्टि हो गई है कि यह अपीलकर्ता ही था जिसने प्रदर्श प -2 तथा इसका संलग्नक तैयार करवाया था, तो इस निष्कर्ष पर पहुँचने में कोई कठिनाई नहीं हो सकती है कि संलग्नकों के साथ प्रदर्श प-3 सहायक बंदोबस्त अधिकारी के समक्ष अपीलकर्ता द्वारा स्वयं ही प्रस्तुत किया गया या भेजा गया था। अपीलार्थी का यह कथन कि मूल प्रदर्श प- 3 के संबंध में जानकारी नहीं थी, असत्य है।

प्रदर्श प-3 की मूल प्रति अपीलकर्ता के पक्ष में सत्यापित दावा उसका स्वयं का था और इसके संबंध में स्वयं उससे बेहतर कोई नहीं जानता था कि उसकी याचिका सत्यापित थी अथवा नहीं। जो साक्ष्य पुनर्वास मंत्रालय से प्राप्त हुए थे उसमें यह नहीं था कि उसका दावा कभी भी मंत्रालय द्वारा सत्यापित किया गया था। इन परिस्थितियों में यह अवधारित किया जा सकता है कि अपीलार्थी को जानकारी थी कि प्रदर्श प-3 जाली दस्तावेज है जिसे वह मूल के रूप में प्रयोग कर रहा है।यह उपयोग बेईमानीपूर्ण था, यह इस मामले के तथ्यों पर भी स्पष्ट है, क्योंकि अपीलकर्ता का इरादा ऐसा आवंटन प्राप्त करने का था जिसका वह हकदार नहीं था और इस प्रकार अपने लिए गलत लाभ कमाना चाहता था। हम इस बात से भी संतुष्ट हैं कि मामला तैयारी के चरण से बहुत आगे बढ़ चुका था, क्योंकि जाली दस्तावेज की प्रतिलिपि वास्तव में अपीलकर्ता द्वारा तब उपयोग की गई थी जब उसने इसे सहायक बंदोबस्त अधिकारी को भेजा या प्रस्तुत किया था। अतः हम इस बात से संतुष्ट हैं कि अपीलकर्ता को झझपूरी तरह से अपराधी ठहराया गया है। इस अपील में कोई बल नहीं है और इसे खारिज किया जाता है। अपीलकर्ता जमानत पर है और अब उसे दी गई सजा को पूरा करने के लिए कदम उठाए जाएंगें।

राहुल कुमार सिंह
(मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, बागपत)
द्वारा जांच की गई।